अशुद्ध चित्त–शुद्ध चित्त

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

चेतना की शक्ति को चित्त कहते हैं। स्थूल शरीर का मालिक चित्त है। मन और बुद्धि की शक्ति चित्त से संचालित होती है। भाव चित्त से निकलता है। बाहर से भीतर या भीतर से बाहर जाने के लिए चित्त से सम्पर्क करना पड़ता है। आत्मा चेतन है। सच्चिदानन्द स्वरूप है। आत्मा ज्ञान दर्शन युक्त है। चित्त शुद्ध और अशुद्ध होता है। चित्त विक्षिप्त होता है। स्थूल शरीर का संचालक चित्त है और आत्मा का प्रतिनिधित्व करता है। मूल स्वरूप शुद्ध आत्मा कषाय के साथ जुड़ जाने पर कार्मण शरीर का कार्य करता है। लिंग शरीर को कार्मण शरीर भी कहते हैं। जड़ और चेतन आत्मा और कार्मण शरीर कब से जुड़े हैं। इस प्रश्न के उत्तर में भगवान महावीर ने कहा कि ये पश्चानुपूर्वी हैं। ये अनन्तकाल से जुड़े हुए हैं।

कषाय के कारण ही चित्त अशुद्ध हो जाता है। कषाय शुद्धि से आत्मा की शुद्धि होती है। आत्मा की शुद्धता से मुक्ति प्राप्त होती है। क्रोध, मान, माया, लोभ कषाय हैं। कषाय का वटवृक्ष है इसे राग–द्वेष कहते हैं। कषाय शुद्धिः किल आत्मशुद्धिः अर्थात कषाय को जीतकर आत्मशुद्धि की जा सकती है। कषाय को नष्ट करने से आत्मा शुद्ध हो जाती है। कषाय बंधन है और आत्मशुद्धि मुक्ति है। कषाय के कारण आत्मा का प्रकाश आवृत्त हो जाता है। जैसे बादलों के घिर जाने पर सूर्य का प्रकाश दिखलाई नहीं पड़ता वैसे ही कषाय के आ जाने के कारण आत्मा का प्रकाश नष्ट हो जाता है। कषाय आत्मा का शत्रु है। कषाय के नष्ट होने पर आत्म शान्ति प्राप्त होती है।

हमारा अस्तित्व ही आत्मा है। आत्मा राग–द्वेष मुक्त होना चाहिए। आत्मा का ज्ञान सचिदानन्द का ज्ञान है। संत लोग आंतरिक सत्य को ही सब कुछ मानते हैं। बाह्‌य सत्य क्षणिक है। आज है कल नहीं रहेगा। आत्मा एक शास्वत सत्य है। शास्वत तत्व ही आत्मा है। जब आदमी कषाय के वशीभूत होता है तो वह राग–द्वेष ग्रस्त हो जाता है। राग–द्वेष बंधन का कारण है।

जब आत्मा राग–द्वेष से मुक्त होता है तो वह अपने निजी स्वरूप में अवस्थित होता है। इसीलिए कहा गया है कि राग–द्वेष से मुक्त आत्मा ही विशुद्ध आत्मा है।

मोह का अर्थ है अविद्या, अज्ञान, क्रोध, मान, माया, लोभ मोह का परिवार बड़ा लम्बा है। जितनी बुराइयां हैं वह सब मोह रूपी वटवृक्ष की शाखाएं हैं। भारतीय संस्कृति में अनेकता में एकता को महत्व दिया गया है। सभी संस्कृतियों में मोह को अज्ञान कहा गया है। दुःख का कारण मोह है। मोह के कारण व्यक्ति गलत कार्य करता है। निर्मोही अवस्था अच्छाई की अवस्था है। इसलिए बुद्धि को मोह से मुक्त होना चाहिए।

शरीर में पांच कर्मेन्द्रियां, पांच ज्ञानेन्द्रियां और मन सदैव सक्रिय रहता है। इन्द्रियां बाह्य विषयों को ग्रहण कर मन को प्रदान करती हैं। बुद्धि का कार्य है निर्णय करना। कुबुद्धि और सुबुद्धि अपना कार्य करती रहती हैं। सुबुद्धि से अच्छा कार्य और कुबुद्धि से बुरा कार्य होता है। कुबुद्धि बुराई है। राग–द्वेष से किया गया कार्य स्वार्थ से प्रेरित होता है। प्रज्ञा निर्मोही होती हैं। प्रज्ञा आत्मा का प्रतिनिधित्व करती है। प्रज्ञा जागृत रहती है तो बुद्धि मोह युक्त नहीं होती। प्रज्ञा तीसरा नेत्र है। तीसरे नेत्र के उद्घाटित हो जाने पर दृष्टि में समभाव आ जाता है। गीता में स्थितप्रज्ञ का विवेचन किया गया है। स्थितप्रज्ञ की अवस्था समता की अवस्था है। इस अवस्था में मन से राग–द्वेष समाप्त हो जाता है।

मानव जैसा बीज बोता है वैसे ही उसको फल प्राप्त होता है। बीज बोने में हम स्वतन्त्र हैं किन्तु फल में परतन्त्र है। जैसा बीज वैसा फल। कारण के बिना कार्य नहीं होता। यदि कारण अच्छा है तो कार्य भी अच्छा होगा। जैसा पुरुषार्थ किया जायेगा परिणाम भी वैसा ही होगा। मोहग्रस्त बुद्धि अच्छे और बुरे में निर्णय नहीं कर पाती। इसलिए बुद्धि की निर्मलता बहुत आवश्यक है। बुद्धि मोहग्रस्त न होकर मोहमुक्त होनी चाहिए। हमारे विचारधारा निष्पक्ष होनी चाहिए।

महाभारत का युद्ध मोहग्रस्तता का परिणाम था। यदि धृतराष्ट्र पुत्र मोह से ग्रस्त न होते तो महाभारत का युद्ध न होता। जहां मोह वहां विनाश अवश्यंभावी है। व्यक्ति को निर्मोही जीवन जीना चाहिए। निर्मोही अवस्था में ही निष्पक्षता हो सकती है। न्यायाधीश किसी पक्ष को छोटा

या बड़ा नहीं समझता। वह तर्क का परिक्षण करता है और न्याय देता है। यदि वह मोहग्रस्त हो जाये तो न्याय ही गलत हो जायेगा। सभी के साथ समता का व्यवहार होना चाहिए।

एक पिता के पुत्रों में पिता की दृष्टि मोहग्रस्त नहीं होनी चाहिए, नहीं तो पुत्रों में संघर्ष होता रहेगा। भारतीय संस्कृति में चार पुरुषार्थ माने गये है– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। मोक्ष मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। मोक्ष की प्राप्ति कैसे हो यह एक बड़ा प्रश्न है। योगी हो या भोगी सभी यह चाहते है कि उनके जीवन का अन्त अच्छा हो। किन्तु अपने–अपने कर्मों के अनुसार सबको फल प्राप्त होता है और कर्मों के अनुसार ही चौरासी लाख जीव योनियों में भटकना पड़ता है। सुख–दुःख जीवन में आने वाले दो पड़ाव हैं। अपने प्रारब्ध के अनुसार या कृत कर्मों के अनुसार सबको सुख–दुःख भोगना पड़ता है।